राजस्थान उच्च न्यायालय, जयपुर पीठ

एकलपीठ सिविल रिट याचिका संख्या 14042/2021

विनोद कुमार कश्यप पुत्र श्री करण सिंह कश्यप, निवासी बी-नारायण गेट, धीमर मोहल्ला, भरतपुर, राजस्थान।

----याचिकाकर्ता

बनाम

1. भारतीय खाद्य निगम, महाप्रबंधक के माध्यम से, क्षेत्रीय कार्यालय, नेहरू प्लेस, टोंक रोड, जयपुर।
2. कार्यकारी निदेशक (एनज़ैड), भारतीय खाद्य निगम, क्षेत्रीय कार्यालय (एन), नोएडा (यू.पी.)।
3. संभागीय प्रबंधक, भारतीय खाद्य निगम संभागीय कार्यालय अलवर।

----प्रत्यर्थीगण

<u>निम्नलिखित से संबद्ध</u>

एकलपीठ सिविल रिट याचिका संख्या 11894/2021

मुन्नू लाल मौर्य पुत्र स्वर्गीय श्री पलटू प्रसाद मोरया, उम्र लगभग 34 वर्ष, निवासी प्लॉट नंबर 40, विनोबा विहार, त्रिमवती अपार्टमेंट के पास, मोडल टाउन-सी, मालवीय नगर, जयपुर

----याचिकाकर्ता

बनाम

1. भारतीय खाद्य निगम, महाप्रबंधक के माध्यम से, क्षेत्रीय कार्यालय, नेहरू प्लेस, टोंक रोड, जयपुर।
2. कार्यकारी निदेशक (एनज़ैड), भारतीय खाद्य निगम, क्षेत्रीय कार्यालय (एन), नोएडा (यू.पी.)।
3. संभागीय प्रबंधक, भारतीय खाद्य निगम, संभागीय कार्यालय अलवर।

----प्रत्यर्थीगण

याचिकाकर्ता (गण) की ओर से	:	श्री पल्लव चौधरी, अधिवक्ता
प्रत्यार्थी (गण) की ओर से	:	श्री आर.एन.माथुर, वरिष्ठ अधिवक्ता
		श्री सोवित झाझरिया, एडवोकेट

श्री ओम प्रकाश श्योराण, एडवोकेट

द्वारा सहायता प्रदान की गई।

माननीय न्यायमूर्ति इंद्रजीत सिंह

आदेश

रिपोर्टेबल

25/04/2022

1. चूंकि दोनों रिट याचिकाओं में कानून के सामान्य प्रश्न शामिल हैं, इसलिए दोनों पक्षों की सहमति से दोनों रिट याचिकाओं को एक साथ सुना गया है और वर्तमान सामान्य आदेश द्वारा तय किया जा रहा है। दोनों रिट याचिकाओं में की गई प्रार्थना समान होने के कारण निम्नानुसार है:–

> "इसलिए, विनम्रतापूर्वक प्रार्थना की जाती है कि आप इस रिट याचिका को स्वीकार करने और अनुमति देने की कृपा करें, वर्तमान मामले से संबंधित पूरे रिकॉर्ड की मांग करें-
>
> i) एक उचित रिट, आदेश या निर्देश जारी करके, प्रत्यर्थीगण द्वारा जारी दिनांक 11.8.2021 के आक्षेपित ज्ञापन को रद्द किया और आपास्त किया जाए।
>
> ii) एक उचित रिट, आदेश या निर्देश जारी करके प्रत्यर्थीगण को याचिकाकर्ता के खिलाफ दर्ज आपराधिक मामले के तथ्यों के समान सेट के आधार पर याचिकाकर्ता के खिलाफ कोई विभागीय कार्यवाही शुरू करने से रोका जाए।
>
> iii) कोई अन्य राहत, आदेश या निर्देश, जिसे यह माननीय उच्च न्यायालय उचित और उचित समझे, उसे भी याचिकाकर्ता के पक्ष में पारित किया जाए।"

2. मामले के संक्षिप्त तथ्य यह हैं कि याचिकाकर्ता-विनोद कुमार कश्यप (सीडब्ल्यूपी-14042/2021) और याचिकाकर्ता मुन्ना लाल मौर्य (सीडब्ल्यूपी-11894/2021), दोनों संबंधित समय पर भरतपुर में भारतीय खाद्य निगम (इसके बाद एफसीआई के रूप में संदर्भित) में क्रमशः एजी-I(डी) और प्रबंधक (क्यूसी) के रूप में काम कर रहे थे। शिकायतकर्ता आदित्य अग्रवाल द्वारा भ्रष्टाचार निरोधक विभाग (जिसे बाद में एसीडी के रूप में संदर्भित किया जाएगा) को इस आशय की शिकायत की गई थी कि उनके पास श्री महावीर ट्रेडिंग कंपनी की देखभाल करने के लिए उनके नाना द्वारा दिए गए उनके नाम पर पावर ऑफ अटॉर्नी है, जिसे एफसीआई द्वारा रूपवास अनाज मंडी, अलवर

की हैंडलिंग और परिवहन का काम सौंपा गया है। उनके द्वारा यह भी आरोप लगाया गया था कि सौंपे गए कार्य के निर्वहन में, उन्होंने रूपवास अनाज मंडी, अलवर से गेहूं की बोरियां लीं और उन्हें एफसीआई के गोदाम में जमा किया और जब उन्होंने तत्कालीन डिपो प्रबंधक विनोद कश्यप से जमा की रसीद जारी करने के बारे में पूछा, तो उन्होंने शिकायतकर्ता से 1 लाख रुपये की रिश्वत मांगी। शिकायतकर्ता आदित्य अग्रवाल द्वारा की गई शिकायत के आधार पर, एसीडी के अधिकारियों द्वारा ट्रैप की कार्यवाही की गई, जिसके दौरान यह पाया गया कि याचिकाकर्ता विनोद कुमार कश्यप द्वारा शिकायतकर्ता से 1 लाख रुपये की रिश्वत मांगी गई थी और ली गई थी और उक्त राशि में से 20000 रुपये एक अन्य याचिकाकर्ता मुन्ना लाल द्वारा विनोद कुमार कश्यप से लिए गए थे और दोनों याचिकाकर्तागण को अधिकारियों द्वारा रंगे हाथों पकड़ लिया गया था। एसीडी ने भ्रष्टाचार निवारण (संशोधित) अधिनियम, 2018 (इसके बाद अधिनियम, 2018 के रूप में संदर्भित) की धारा 7 और 7क के साथ-साथ आईपीसी की धारा 120ख के तहत अपराधों के लिए एसीडी द्वारा एफआईआर संख्या 219/2021 दर्ज की थी। चूंकि याचिकाकर्तागण को एफआईआर संख्या 219/2021 में लगाए गए आरोप के अनुसार रिश्वत लेते हुए रंगे हाथों पकड़ा गया था, इसलिए याचिकाकर्तागण के खिलाफ अनुशासनात्मक कार्यवाही पर विचार करते हुए, दोनों को एफसीआई के सक्षम प्राधिकारी द्वारा एफसीआई (स्टाफ) विनियम 1971 (इसके बाद विनियम, 1971 के रूप में संदर्भित) के विनियम 66 के उप-खंड 1 (क) के तहत प्रदत्त शक्ति का उपयोग करते हुए दोनों को 24.06.2021 के आदेश के तहत निलंबित कर दिया गया था और उनका मुख्यालय एफसीआई, डीओ, जयपुर में रखा गया था। इसके बाद, दोनों याचिकाकर्तागण को दिनांक 11.08.2021 को आरोप पत्र दिया गया। इसलिए, याचिकाकर्तागण द्वारा 11.08.2021 के आरोप ज्ञापन को रद्द करने के साथ-साथ प्रत्यर्थीगण को याचिकाकर्तागण के खिलाफ विभागीय कार्यवाही शुरू करने से रोकने के लिए इस आधार पर कि ये रिट याचिकाएं दायर की गई हैं, कि तथ्यों के समान सेट पर उनके खिलाफ एक आपराधिक मामला दर्ज किया गया है, जिसमें मुकदमा चल रहा है।

3. याचिकाकर्तागण के अधिवक्ता ने यह तर्क दिया कि याचिकाकर्तागण के

खिलाफ आरोप रिश्वत लेने का है, जिसके आधार पर उनके खिलाफ अधिनियम, 2018 के साथ-साथ आईपीसी के तहत प्राथमिकी दर्ज की गई है और उन्हें 24.06.2021 के आदेश के तहत निलंबित कर दिया गया है और उन्हें 11.08.2021 को एक ज्ञापन दिया गया है। अधिवक्ता ने आगे कहा कि आरोप ज्ञापन के साथ-साथ एफआईआर दोनों तथ्यों के एक ही सेट पर आधारित हैं, इसलिए, प्रत्यर्थीगण द्वारा जारी किए गए आरोप ज्ञापन को रद्द कर दिया जाए और उपरोक्त आपराधिक मामले में मुकदमे के अंतिम समापन तक विभागीय कार्यवाही पर रोक लगा दी जाए। अधिवक्ता ने आगे कहा कि आपराधिक मामला जून, 2021 में स्थापित किया गया था और जहां तक मुकदमे के लंबित रहने का संबंध है, याचिकाकर्तागण की कोई गलती नहीं है और अंत में रिट याचिका की अनुमति देने के लिए प्रार्थना की।

4. दलीलों के समर्थन में, अधिवक्ताअ ने **भागीरथ राम बनाम राजस्थान राज्य एवं अन्य (एकलपीठ सिविल रिट याचिका संख्या 2682/2021- 13.09.2021** को निर्णय सुनाया गया) के मामले में प्रधान न्यायपीठ, जोधपुर में इस न्यायालय की समन्वय खंडपीठ द्वारा और **देवेंद्र कुमार मेहता बनाम भारत संघ एवं अन्य (खंडपीठ सिविल रिट याचिका संख्या 17314/2019- 12.01.2022** को तय किया गया) पारित निर्णय के मामले में प्रधान न्यापीठ, जोधपुर में इस न्यायालय के खंडपीठ द्वारा पारित निर्णय पर भरोसा किया। ।

5. इसके अलावा, अधिवक्ता ने **मैसर्स स्टैनजेन टोयोटा इंडिया प्राइवेट लिमिटेड बनाम गिरीश एवं अन्य,** वर्ष **2014 में एआईआर (एससी 989)** में प्रकाशित मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित निर्णय पर भी निर्भरता व्यक्त की है जिसमें पैरा 16 में निम्नानुसार कहा गया है:-

> "16. इन परिस्थितियों में और ऊपर उल्लिखित सभी पहलुओं को ध्यान में रखते हुए और इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि नीचे दिए गए सभी तीन न्यायालयों ने चल रही अनुशासनात्मक कार्यवाही पर रोक लगाने के पक्ष में अपने विवेक का प्रयोग किया है, हम उक्त आदेश को सीधे रद्द करना उचित नहीं समझते हैं। हमारी राय में, न्याय के हितों का पर्याप्त रूप से संरक्षण होगा यदि हम प्रत्यर्थीगण के खिलाफ आपराधिक आरोपों का निपटान करने वाले न्यायालय को निर्देश देते हैं कि कार्यवाही को यथासंभव तेजी से किसी भी मामले में समाप्त किया जाए लेकिन इस आदेश की तारीख से एक वर्ष की अवधि के भीतर। हम आशा और विश्वास करते हैं कि ट्रायल कोर्ट यह सुनिश्चित करने के लिए प्रभावी

कदम उठाएगा कि गवाहों को तामील कराया जाए, पेश किया जाए और उनसे पूछताछ की जाए। इस उद्देश्य के लिए अदालत हर बार स्थगन की आवश्यकता होने पर मामले को एक पखवाड़े से अधिक समय के लिए स्थगित नहीं कर सकती है। हम आपराधिक मामले में आरोपी से यह भी उम्मीद करते हैं कि कार्यवाही जल्द पूरी करने के लिए ट्रायल कोर्ट के साथ सहयोग करे। हम ऐसा इसलिए कह रहे हैं क्योंकि अनुभव से पता चला है कि गवाहों से जिरह करने के लिए बचाव पक्ष के वकीलों की अनुपलब्धता या उनके द्वारा मांगे गए स्थगन के कारण मुकदमे अक्सर लंबे समय तक चलते रहते हैं। इन सब चीजों से बचने की जरूरत है। तथापि, यदि इस आदेश की तारीख से एक वर्ष की अवधि के भीतर परीक्षण पूरा नहीं होता है, तो प्रत्यर्थीगण के खिलाफ शुरू की गई अनुशासनात्मक कार्यवाही को उठाने के लिए ट्रायल कोर्ट को निर्देश दिए जाने के बावजूद संबंधित जांच अधिकारी द्वारा फिर से शुरू किया जाएगा और समाप्त किया जाएगा। उस मामले में लागू आदेश आदेश की तारीख से एक वर्ष की अवधि की समाप्ति पर समाप्त हो जाएंगे।"

6. प्रत्यर्थीगण की ओर से पेश वरिष्ठ अधिवक्ता श्री आर. एन. माथुर ने रिट याचिकाओं का विरोध किया और कहा कि याचिकाकर्तागण को एसीडी के अधिकारियों द्वारा रिश्वत लेते हुए रंगे हाथों पकड़ा गया था, जिसके लिए याचिकाकर्तागण के खिलाफ अधिनियम, 2018 की धारा 7 और 7क के तहत और आईपीसी की धारा 120-ख के तहत आपराधिक मामला दर्ज किया गया था इसके अलावा, याचिकाकर्तागण के विरुद्ध विनियम, 1971 के विनियम 37-क (1) और 32-क (2) के तहत कदाचार के लिए विभागीय कार्यवाही भी आरंभ की गई थी। उन्होंने आगे कहा कि हालांकि विभाग द्वारा निलंबन आदेश 11.08.2021 को जारी किया गया था, लेकिन आपराधिक मामला लंबित होने के दौरान, प्रत्यर्थीगण द्वारा उनका निलंबन रद्द कर दिया गया है। उन्होंने आगे कहा कि याचिकाकर्तागण को एसीडी के अधिकारियों द्वारा रिश्वत मांगते और लेते हुए रंगे हाथों पकड़ा गया था और उन्होंने निगम की प्रतिष्ठा को भी नुकसान पहुंचाया था और उनका ऐसा कृत्य विनियम, 1971 के तहत परिभाषित गंभीर कदाचार की परिभाषा के अंतर्गत आता है और उन्होंने विनियम 32-क (1) और 32-ख (2) के प्रावधानों का संदर्भ दिया, जो निम्नानुसार है:–

"32-क कदाचार:

कदाचार शब्द की व्यापकता से पूर्वाग्रह के बिना "लोप और करण त्रुटि" के निम्नलिखित कृत्यों को कदाचार के रूप में माना जाएगा:

(1) निगम की संपत्ति के व्यापार या निगम के परिसर के भीतर किसी अन्य व्यक्ति की संपत्ति के संबंध में चोरी, धोखाधड़ी या बेईमानी।

(2) रिश्वत लेना या देना या कोई अवैध लाभ।"

7. दलीलों के समर्थन में, अधिवक्ता ने **राजस्थान राज्य बनाम बीके मीणा एवं अन्य (1996) 6 एससीसी 417** में प्रकाशित मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित निर्णय पर भरोसा किया जहां पैरा 11, 17 और 19 में इसे निम्नानुसार कहा गया है: –

> "11. हमारी राय है कि अधिकरण का आदेश कानून और मामले के तथ्यों दोनों ही आधारों पर अस्थिर है। एस.ए. वेंकटरमन बनाम भारत संघ मामले में याचिकाकर्ता पर प्रथमतः अनुशासनात्मक कार्यवाही चलाई गई थी और 17 सितंबर, 1953 को उसे को सेवा से बर्खास्त कर दिया गया था। 23 फरवरी, 1954 को पुलिस ने याचिकाकर्ता के खिलाफ उन्हीं आरोपों के संबंध में एक आपराधिक अदालत में आरोप पत्र प्रस्तुत किया। याचिकाकर्ता ने इस आधार पर आपराधिक कार्यवाही शुरू करने को चुनौती दी कि यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 20 के खंड (2) के अर्थ के भीतर उसे दोहरे खतरे में डालने के समान है। इस न्यायालय की एक संविधान पीठ ने उक्त याचिका को यह कहते हुए खारिज कर दिया कि चूंकि उक्त याचिका को कानूनी रूप से खारिज नहीं किया गया है, अतः इस आधार पर आपराधिक कार्यवाही शुरू करने या जारी रखने पर कोई कानूनी आपत्ति नहीं है कि उसे अनुशासनात्मक कार्यवाही में पहले दंडित किया गया था। अतः यह स्पष्ट है और प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता अधिवक्ता श्री के. माधव रेड्डी द्वारा इस तथ्य पर विवाद नहीं किया गया है कि कानून में एक साथ आपराधिक कार्यवाही और अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू करने पर कोई रोक या निषेध नहीं है। वास्तव में न केवल उक्त दो कार्यवाहियां, बल्कि यदि आवश्यक पाया जाता है, तो एक सिविल मुकदमा भी एक साथ चलाया जा सकता है। हालांकि, श्री माधव रेड्डी ने तर्क दिया कि जैसा कि इस न्यायालय ने बाद के कुछ निर्णयों में कहा था, आपराधिक कार्यवाही के साथ-साथ अनुशासनात्मक कार्यवाही के साथ आगे बढ़ना वांछनीय या उचित नहीं होगा।
>
> 17. एक और कारण है। आपराधिक कार्यवाही और अनुशासनात्मक कार्यवाही में दृष्टिकोण और उद्देश्य पूरी तरह से भिन्न और अलग है। अनुशासनात्मक कार्यवाही में, प्रश्न यह है कि क्या प्रत्यर्थी ऐसे आचरण का दोषी है जो उसे सेवा से हटाए जाने या कम सजा के योग्य हो, जैसा भी मामला हो, जबकि आपराधिक कार्यवाही में प्रश्नन यह है कि क्या भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम (और भारतीय दंड संहिता, यदि कोई हो) के तहत उसके खिलाफ दर्ज अपराध स्थापित होते हैं और, यदि यह साबित हो जाता है, तो उसे क्या सजा दी जानी चाहिए। दोनों मामलों में सबूत का मानक, जांच का तरीका और जांच और परीक्षण को नियंत्रित करने वाले नियम पूरी तरह से अलग और अलग हैं। आपराधिक कार्यवाही लंबित रहने तक अनुशासनात्मक कार्यवाही पर रोक लगाना निश्चित रूप से मामला नहीं होना चाहिए, बल्कि एक सुविचारित निर्णय होना चाहिए। यहां तक कि अगर एक स्तर पर रोक लगाई जाती है, तो आपराधिक मामले में अनावश्यक देरी होने पर निर्णय पर पुनर्विचार की आवश्यकता हो सकती है।
>
> 19. उपरोक्त कारणों से, यह माना जाना चाहिए कि अधिकरण ने प्रत्यर्थी

के खिलाफ आपराधिक कार्यवाही लंबित होने तक अनुशासनात्मक कार्यवाही पर रोक लगाने में गलती की थी। तदनुसार खर्च के साथ अपील की अनुमति दी जाती है। अधिकरण के आदेश को रद्द किया जाता है। आपराधिक कार्यवाही के परिणाम की प्रतीक्षा किए बिना प्रत्यर्थी के खिलाफ अनुशासनात्मक कार्यवाही तेजी से चलेगी। अपीलकर्ता का अनुमानित खर्चा 5,000 रुपये है।"

8. उन्होंने आगे **कैप्टन एम पॉल एंथनी बनाम भारत गोल्ड माइन्स लिमिटेड एवं अन्य, (1999) 3 एससीसी 679** में प्रकाशित मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित निर्णय पर भी भरोसा किया जहां पैरा 22 में इसे निम्नानुसार कहा है:-

"22. ऊपर उल्लिखित इस न्यायालय के विभिन्न निर्णयों से जो निष्कर्ष निकाले गए हैं, वे हैं:

(i) आपराधिक मामले में विभागीय कार्यवाहियां और अन्य कार्यवाहियां एक साथ आगे बढ़ सकती है क्योंकि उन्हें एक साथ संचालित करने में कोई रोक नहीं है, हालांकि वे अलग-अलग चलती हैं।

(ii) यदि विभागीय कार्यवाही और आपराधिक मामला समान और समरूप तथ्यों पर आधारित हैं और अपराधी कर्मचारी के खिलाफ आपराधिक मामले में आरोप गंभीर प्रकृति का है जिसमें कानून और तथ्य के जटिल प्रश्न शामिल हैं, तो आपराधिक मामले के समापन तक विभागीय कार्यवाही पर रोक लगाना वांछनीय होगा।

(iii) क्या किसी आपराधिक मामले में आरोप की प्रकृति गंभीर है और क्या उस मामले में तथ्य और कानून के जटिल प्रश्न शामिल हैं, यह अपराध की प्रकृति, जांच के दौरान उसके खिलाफ एकत्र किए गए सबूतों और सामग्री के आधार पर कर्मचारी के खिलाफ शुरू किए गए मामले की प्रकृति पर निर्भर करेगा या जैसा कि आरोप पत्र में परिलक्षित होता है।

(iv) उपर्युक्त (ii) और (iii) में उल्लिखित कारकों पर विभागीय कार्यवाही पर रोक लगाने के लिए अलग से विचार नहीं किया जा सकता है, लेकिन इस तथ्य पर उचित ध्यान दिया जाना चाहिए कि विभागीय कार्यवाही में अनावश्यक रूप से देरी नहीं की जा सकती है।

(v) यदि आपराधिक मामला आगे नहीं बढ़ता है या इसके निपटान में अनावश्यक रूप से देरी हो रही है, तो विभागीय कार्यवाही, भले ही आपराधिक मामले के लंबित होने के कारण उन पर रोक लगा दी गई हो, को फिर से शुरू किया जा सकता है और आगे बढ़ाया जा सकता है ताकि उन्हें जल्द से जल्द समाप्त किया जा सके, ताकि यदि कर्मचारी दोषी नहीं पाया जाता है तो उसका सम्मान कायम रहे और यदि वह दोषी पाया जाता है, तो प्रशासन जल्द से जल्द उससे छुटकारा पा सकता है।"

9. उन्होंने **ललित पोपली बनाम केनरा बैंक एवं अन्य, (2003) 3 एससीसी 583** में प्रकाशित मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित निर्णय पर भी भरोसा किया, जिसमें पैरा 16 में यह कहा गया है-

"16. यह काफी अच्छी तरह से तय है कि आपराधिक कार्यवाही और अनुशासनात्मक कार्यवाही में दृष्टिकोण और उद्देश्य पूरी तरह से अलग और अलग हैं। अनुशासनात्मक कार्यवाही में प्रारंभिक प्रश्न यह है कि क्या कर्मचारी ऐसे आचरण का दोषी है जो उसके खिलाफ कार्रवाई के योग्य होगा; जबकि आपराधिक कार्यवाही में प्रश्नन यह है कि क्या उसके खिलाफ दर्ज अपराध स्थापित हैं और यदि स्थापित हो जाता है तो उसे क्या सजा दी जानी चाहिए। सबूत का मानक, जांच का तरीका और जांच और परीक्षण को नियंत्रित करने वाले नियम अवधारणात्मक रूप से अलग हैं [देखें राजस्थान राज्य बनाम बीके मीणा]। अनुशासनात्मक जांच के मामले में साक्ष्य के तकनीकी नियमों का कोई अनुप्रयोग नहीं है। "संदेह से परे सबूत" के सिद्धांत का कोई अनुप्रयोग नहीं है। इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए संभावनाओं की अधिकता और रिकॉर्ड पर कुछ सामग्री आवश्यक है कि अपराधी ने कदाचार किया है या नहीं।"

10. अधिवक्ता ने **केंद्रीय विद्यालय संगठन एवं अन्य बनाम टी श्रीनिवास**, **(2004) 7 एससीसी 442** में प्रकाशित मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित निर्णय पर भी भरोसा किया, जिसमें पैरा संख्या 11, 13 और 14 में इसे निम्नानुसार कहा गया है:–

"11. इस मामले में, अधिकरण के आदेश के साथ-साथ उच्च न्यायालय के आक्षेपित आदेश से, हम यह नहीं पाते हैं कि नीचे दिए गए दो मंचों ने इस मामले के विशेष तथ्यों पर विचार किया है जिसने उन्हें विभागीय कार्यवाही पर रोक लगाने के लिए राजी किया है। इसके विपरीत, दो आक्षेपित आदेशों को पढ़ने से संकेत मिलता है कि अधिकरण और उच्च न्यायालय दोनों ही ने आगे कार्यवाही की, मानो कि हर मामले में विभागीय जांच पर रोक लगाई जानी चाहिए जहां एक ही कदाचार के संबंध में आपराधिक मुकदमा लंबित है। न तो अधिकरण और न ही उच्च न्यायालय ने आरोप की गंभीरता पर विचार किया जो अवैध रिश्वत की स्वीकृति और प्रत्यर्थी के खिलाफ लगाए गए ऐसे गंभीर आरोपों के बावजूद सेवा में बने रहने की वांछनीयता से संबंधित है। राजस्थान राज्य के उक्त मामले में इस न्यायालय ने आगे कहा है कि आपराधिक कार्यवाही और अनुशासनात्मक कार्यवाही में दृष्टिकोण और उद्देश्य पूरी तरह से भिन्न अलग और अलग है। यह माना गया कि अनुशासनात्मक कार्यवाही में प्रश्नन यह है कि क्या प्रत्यर्थी ऐसे आचरण का दोषी है जो उसे सेवा से हटाने या कम सजा के योग्य हो, जैसा कि मामला हो, जबकि आपराधिक कार्यवाही में प्रश्नन यह है कि क्या उसके खिलाफ दर्ज अपराध स्थापित हैं और यदि स्थापित हो जाता है, तो उसे क्या सजा दी जानी चाहिए। उपरोक्त मामले में अदालत ने आगे कहा कि सबूत का मानक, जांच का तरीका और दोनों मामलों में जांच और परीक्षण को नियंत्रित करने वाले नियम अलग-अलग और अलग हैं। उस आधार पर, राजस्थान राज्य के मामले में तथ्य, जो इस मामले के तथ्यों के लगभग समान प्रतीत होते हैं, यह निर्णय लिया गया कि अधिकरण द्वारा अनुशासनात्मक कार्यवाही पर रोक लगाने में त्रुटि की गई।

13. जैसा कि ऊपर कहा गया है, इस मामले में, अधिकरण और उच्च

न्यायालय दोनों ने आगे यह तर्क दिया मानो विभागीय जांच और आपराधिक मुकदमा एक साथ आगे नहीं बढ़ सकते हैं, इसलिए, उन्होंने विभागीय जांच पर रोक लगा दी, जो हमारी राय में, उपरोक्त उद्धृत मामलों में निर्धारित सिद्धांतों के विपरीत है।

14. हमारी राय है कि अधिकरण और उच्च न्यायालय दोनों ने इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार किए बिना एक गलत कानूनी सिद्धांत पर कार्रवाई की और वे इस मामले में इस तरह से आगे बढ़े जैसे कि अनुशासनात्मक कार्यवाही पर रोक हर उस मामले में जरूरी है जहां एक ही आरोप पर आपराधिक मुकदमा चल रहा है। इस पृष्ठभूमि में हमारे लिए दूसरे प्रश्नन पर जाना जरूरी नहीं है कि क्या विभागीय जांच में कम से कम आरोप 3 पर निर्णय करने की अनुमति दी जा सकती थी, जैसा कि अपीलकर्ता के अधिवक्ता ने वैकल्पिक रूप से तर्क दिया है।"

11. अधिवक्ता ने आगे **भारत संघ एवं अन्य बनाम सीताराम मिश्रा एवं अन्य, (2019) 20 एससीसी 588** में प्रकाशित मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित निर्णय पर भरोसा किया जहां पैरा 4, 14 और 15 में इसे निम्नानुसार उल्लेख किया गया है:-

"4. पहले प्रत्यर्थी पर भारतीय दंड संहिता 1860 ("आईपीसी") की धारा 304 के तहत अपराध का मुकदमा भी चलाया गया था। उन्हें न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, अगरतला, त्रिपुरा पश्चिम द्वारा 5-1-2002 को बरी कर दिया गया था।

14. तथ्य यह है कि आपराधिक मुकदमे के दौरान पहले प्रत्यर्थी को बरी कर दिया गया था, यह वास्तव में अनुशासनात्मक कार्यवाही के दौरान सामने आए कदाचार के निष्कर्ष को खराब करने के आधार के रूप में काम नहीं कर सकता है। हमारे विचार में उच्च न्यायालय ने कैप्टन एम पॉल एंथनी बनाम भारत गोल्ड माइन्स लिमिटेड के मामले में इस न्यायालय के निर्णय से गलत निष्कर्ष निकाला है। उच्च न्यायालय ने उपरोक्त निर्णय में निर्धारित कानून के निम्नलिखित सिद्धांतों का पालन किया (एससीसी पी 687, पैरा 13):

> "13.....जबकि विभागीय कार्यवाही में सबूत का मानक संभावनाओं की प्रधानता में से एक है, एक आपराधिक मामले में, अभियोजन पक्ष द्वारा उचित संदेह से परे आरोप साबित किया जाना चाहिए। थोड़ा अपवाद यह हो सकता है कि विभागीय कार्यवाही और आपराधिक मामला तथ्यों के एक ही सेट पर आधारित हो और दोनों कार्यवाहियों में सबूत बिना किसी भिन्नता के समान हों।

15. इसमें कोई संदेह नहीं है कि आपराधिक मुकदमे में आरोप घटना के दौरान एक सह-कर्मचारी की मौत से उत्पन्न हुआ, जिसके परिणामस्वरूप एक गोली चलाई गई जो उस हथियार से निकली हुई थी जिसे बल के सदस्य के रूप में पहले प्रत्यर्थी को सौंपा गया था। लेकिन कदाचार का आरोप अपने हथियार को संभालने में पहले प्रत्यर्थी की लापरवाही और हथियार को संभालने के तरीके के संबंध में विभागीय निर्देशों का पालन करने में उसकी विफलता के आधार पर है। नतीजतन, आपराधिक मामले

में बरी किया जाना अनुशासनात्मक जांच के दौरान लगाए गए जुर्माने को रद्द करने का आधार नहीं था। इसलिए, अनुशासनात्मक मामलों में न्यायिक समीक्षा के अभ्यास को नियंत्रित करने वाले मापदंडों को ध्यान में रखते हुए, हमारा विचार है कि उच्च न्यायालय की खंडपीठ का निर्णय अस्थिर है।"

12. पक्षों के वकीलों को सुना गया और रिकॉर्ड का अवलोकन किया गया।

13. याचिकाकर्तागण द्वारा दायर ये रिट याचिकाएं इन कारणों से खारिज किए जाने के लायक हैं; सबसे पहले, याचिकाकर्तागण के खिलाफ आपराधिक मामला दर्ज किया गया था क्योंकि उन्हें रिश्वत लेते हुए रंगे हाथों पकड़ा गया था, जबकि विभागीय कार्यवाही में, याचिकाकर्तागण के खिलाफ आरोप न केवल रिश्वत लेने के हैं, बल्कि कदाचार और निगम की प्रतिष्ठा को नुकसान पहुंचाने के भी हैं, जैसा कि विनियम, 1971 के तहत परिभाषित किया गया है; दूसरे, विभागीय कार्यवाही और आपराधिक मामले में कार्यवाही एक साथ आगे बढ़ सकती है क्योंकि उनके एक साथ आयोजित होने में कोई रोक नहीं है, हालांकि उनका संचालन अलग-अलग किया जाता है, जैसा कि माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **कैप्टन एम पॉल एंथनी और भारत संघ (दोनों सुप्रा.)** के मामले में माना गया है; तीसरे, ऐसा कोई नियम नहीं है कि विभागीय जांच पर हर उस मामले में रोक लगाई जानी चाहिए जहां उसी कदाचार के संबंध में आपराधिक मुकदमा लंबित है, वर्तमान मामले में, याचिकाकर्तागण को रिश्वत लेते हुए रंगे हाथों पकड़ा गया है और अनुशासनात्मक कार्यवाही में प्रश्नन यह है कि क्या याचिकाकर्ता ऐसे कदाचार के दोषी हैं जो **केन्द्रीय विद्यालय संगठन (सुप्रा.)** के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित निर्णय को ध्यान में रखते हुए उन्हें सेवा से हटाने या कम सजा के योग्य होगा, इसलिए, इन तथ्यों और परिस्थितियों में, मैं भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत इस न्यायालय के अधिकार क्षेत्र का उपयोग करने का इच्छुक नहीं हूं।

14. इसलिए, इन रिट याचिकाओं को खारिज किया जाता है। इस आदेश की प्रति संबद्ध फ़ाइल में रखी जाए।

(इंद्रजीत सिंह), न्यायमूर्ति

JYOTI /131-132

टिप्पणी: इस निर्णय का हिन्दी अनुवाद निविदा फर्म **राजभाषा सेवा संस्थान** द्वारा किया गया है, जिसे फर्म के निदेशक डॉ. वी. के. अग्रवाल, द्वारा मान्य और सत्यापित किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन व कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।